1857 की क्रांति में जनपद बागपत का बलिदानी गांव ''बसौद''

शोधसार

मोहित

शोधार्थी इतिहास

आई. आई.एम.टी. विश्वविद्यालय, मेरठ

मो0 9917231947

मेल आई डी– tyagi5533@gmail.com

डा. रेनु जैन

एसोसिएट प्रोफंसर (इतिहास)

आई. आई.एम.टी. विश्वविद्यालय, मेरठ

निःसंदेह 1857 की क्रांति विश्व की सबसे महानतम क्रांतियों में से एक है। जिसके माध्यम से भारत वर्ष ने पहली बार संगठित रूप से अंग्रेजो के विरूद्व विद्रोह का उदघोष किया। इस क्रांति में भारत के किसानो ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया तथा अंग्रेजो के साम्राज्य की चूले हिला डाली। इस महान क्रांति में भारत वर्ष के पांच से आठ लाख लोगो ने अंग्रेजो के विरूद्व अपना बलिदान दिया। इस क्रांति की सबसे बडी खास बात यह थी कि इसमें भारत के हर वर्ग, हर धर्म, आम–खास, किसान–मजदूर, स्त्री–पुरूष, हिन्दू–मुस्लिम, सभी ने भाग लिया। इनमें से अधिकांश बलिदानी अनाम व अज्ञात है। अंग्रेजों द्वारा बहुत ही क्रुरता से इसका दमन किया गया। भारतवर्ष के कोने–कोने के क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों के शासन से मुक्ति पाने को इसमें भाग लिया और अपना सर्वोच बलिदान दिया। परन्तु सम्पूर्ण गांव ने इस क्रांति और अपनी मात्रभमि के लिए बलिदान दिया हो ऐसा बामुश्किल ही उदहारण देखने को मिलेगा। वर्तमान जनपद बागपत का एक क्रांतिकारी गांव बसौद ऐसा भी रहा है, जिसके एक या दो व्यक्तियों ने नही बल्कि सम्पूर्ण गांव ने क्रांति की बलिवेदी पर स्वंय को बलिदान कर दिया। जो भारतीयों के लिए सदैव अनुकरणीय, आदरणीय व प्रेरणा का स्त्रोत रहेगा।

मुख्य शब्द– बलिदान, हिन्दू–मुस्लिम, गांव, रसद, गाजी, भारत, मिट्टी।

प्रस्तावना

10 मई 1857 को मेरठ से क्रांति शुरू होते ही वर्तमान जनपद बागपत (जो उस समय जनपद मेरठ का ही भाग हुआ करता था) के सेनानियों ने बागपत को अंग्रेजों से मुक्त करा लिया, अंग्रेजी संस्थानों में आग लगा दी, भारतीय जनता से अंग्रेजों द्वारा लूटा हुआ धन अंग्रेजों से छीनकर क्रांतिकारियों की मदद के लिए दिल्ली भेजा गया, दिल्ली में क्रांतिकारियों को रसद पहुंचाने का महत्वपूर्ण कार्य किया, अंग्रेजों के संचार मार्ग ठप कर दिया गये, अंग्रेजों के समर्थको को को दंड दिया और बागपत की जनता को यह

विश्वास दिलाया कि ब्रिटिश राज अब समाप्त हो चुका है और किसी को भी अंग्रेजों को लगान देने की जरूरत नहीं है। इस प्रकार 11 मई 1857 से लेकर 21 जुलाई 1857 तक बागपत के सेनानियों ने अपने सहास और देशभक्ति के बल पर स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर अंग्रेजों के मनों में भय उत्पन्न कर दिया था। वह बागपत के नाम से भी घबराने लगे थे। बागपत के सभी क्रांतिकारियों ने अपने साहसिक कार्यों तथा जज्बे से इस क्रांति के निमित्त अपनी उपयोगिता सिद्ध की तथा इस क्षेत्र को दिल्ली के लिए आपूर्ति क्षेत्र के रूप में बदल दिया।[1]

बगपत के गांव बिजरौल निवासी बाबा शाहमल के नेतृत्व में बागपत के वीर सेनानियों ने अंग्रेजों को यहां से खदेड दिया था। दिल्ली में स्थित अंग्रेजी सेना को रसद की आपूर्ति भी ना हो सके इसके लिए उन्होंने सबसे पहले यमुना के पुल को तोड़ दिया।[2] इसके पश्चात मेरठ और बागपत को जोड़ने वाला एकमात्र नावों का पुल जो हिंडन नदी (डालुहैडा गांव) पर बना था, उसे भी शाहमल ने अपने साथियों के साथ मिलकर तोड़ दिया।[3] जिससे मेरठ का सीधा संपर्क बागपत से टूट गया। अंग्रेजों को यह बात अब जल्दी ही समझ आ गई थी कि यदि उन्हे दिल्ली पर पुनः कब्जा करना है तो सबसे पहले बागपत में क्रांति का नेतृत्व कर रहें बाबा शाहमल और उनके साथियों को हराना होगा। क्योंकि यह बागपत का क्षेत्र दिल्ली के लिए रसद का स्रोत बन चुका था और इसे अलग करना आवश्यक था।[4]

इसी को स्पष्ट करता हुआ मेरठ का तत्कालिक कलेक्टर विलियम डनलप लिखता है कि ''यह बहुत आवश्यक हो गया है कि अब हमें अपने साहसी शत्रु शाहमल को कुचल देना चाहिए और जो परगना बड़ौत के गुर्जर और मुसलमान विद्रोही हैं उन्हें भी सबक सिखाया जाये उनकी दिल्ली से निकटता के कारण उन्हें रोक पाना अत्यंत कठिन हो गया है।''[5]

इससे स्पष्ट हो जाता है की शाहमल के नेतृत्व में बागपत के क्रांतिवीरों ने अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया था और अब उन्हे लगने लगा था कि जब तक शाहमल के नेतृत्व में जो संपूर्ण बागपत उनके विरुद्ध उठ कर खडा हो गया है उनको सबक नही सिखाया जाता तब तक अंग्रेजो का पुनः दिल्ली विजित करने का सपना पूरा नही हो सकता। हालांकि अंग्रेजों के लिए इन दुष्कर परिस्थितियों में यह बहुत कठिन कार्य था परंतु यह बहुत आवश्यक हो गया था। क्योंकि अगर बागपत के सेनानियों पर लगाम नहीं लगाई गई तो अंग्रेजों का पुनः दिल्ली विजित करने का सपना चकनाचूर हो जाएगा। इसी के साथ बागपत के वीर सेनानी अंग्रेजों के मददगारों को भी नहीं बख्स रहे थे। जैसे–जैसे समय बीतता जा रहा था वैसे–वैसे संपूर्ण बागपत अंग्रेजों के विरुद्ध हो गया था। सभी के मन में यह धारणा दृढ़ हो रही थी कि ब्रिटिश साम्राज्य अब लगभग समाप्त हो गया है। अपने इसी डर को व्यक्त करता हुआ मेरठ कलेक्टर विलियम डनलप 24 जून 1857 को सी. वी. सांडर्स को लिखता है कि ''इस समय मेरठ जिला पूर्णतया असुरक्षित है। जिसके परिणाम स्वरुप

यह लगभग पूरी तरह से अवस्थित हो गया है। चारों तरफ कत्ल, डकैती और लूटपाट हो रहीं है। जब तक हम हमारे दोस्तों (शुभचिंतको) की सहायता करने और दुश्मनों (भारतीय क्रांतिकारियों) को दंड देने के लिए कुछ कठोर कार्यवाही नहीं करते हैं तो लोगों के समूह (भारतीय जनता) द्वारा हम पूरी तरह से नकार दिए जाएंगे। जो लोग अभी भी हमारे प्रति वफादार हैं वह हमसे घृणा करने लगेंगे। यह स्पष्ट रूप से उनकी उपेक्षा है और यदि ऐसा ही होता रहा तो आज का विद्रोह शीघ्र क्रांति बन जाएगा।''[6]

यह डर नहीं तो ओर क्या था। बागपत में इसका सबसे बड़ा कारण था क्रांति का नेतृत्वकर्ता शाहमल और उनके साथी, क्योकि अंग्रेज यह मान चुके थे कि जनपद बागपत में जो भी हो रहा है वह सब शाहमल की कारगुजारियां है। वह सभी पिछले उपद्रवो का मुख्य नेता रहा है।[7]

अतः अब शाहमल और बागपत के अन्य सभी सेनानी अंग्रेजों के निशाने पर आ गये थे। अंग्रेजों का मानना था कि अगर बागपत में क्रांति के नेतृत्वकर्ता शाहमल को पकड़ लिया जाता है या मार दिया जाता है तो बागपत में विद्रोह को शांत किया जा सकता है। बागपत पर अधिकार करने के बाद अंग्रजों को दिल्ली पर भी कब्जा करने में आसानी होगी। इसी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए अंग्रेज अधिकारी ब्रिगेड मेजर कनर्ल डब्ल्यू के तत्पर सहयोग और अमूल्य सहायता से यूरोपियन नागरिकों और कुछ अधिकारियों को मिलाकर एक स्वयंसेवक सेना का गठन किया गया। इसमें सम्मिलित सभी यूरोपियन उस समय मेरठ में शरणार्थी थे। कनर्ल डब्ल्यू के सहयोग से उन्हें एक दर्जन से अधिक घोड़े, हथियार और अन्य सामान भी प्राप्त होने की आशा थी। उनकी वर्दी धूल के रंग की होने के कारण उस स्वयंसेवक सेना को खाकी रिसाला नाम दिया गया था।[8] इस अंग्रेजी सेना खाकी रिसाला की कमान मेरठ कलेक्टर विलियम डनलप के हाथों में दी गई।

शाहमल के नेतृत्व में निरंतर अंग्रेजों के विरूद्व की जा रही कार्यवाहियों से अब अंग्रेज बौखला उठे थे। इसलिए खाकी रिसाला को शाहमल और उसके सहयोगियों का दमन करने के लिए सज किया गया। 16 जुलाई 1857 को यह खाकी रिसाला शाहमल और उसके सहयोगियों को समाप्त करने के लिए मेरठ से चलकर हिंडन नदी डालूहैडा पहुंच।[9]

इस अंग्रेजी सेना विवरण देते हुए विलियम डनलप अपनी किताब 'सर्विस एण्ड एडवेंचर विद दा खाकी रिसाला' में लिखता है कि ''जुलाई के उत्तरार्ध में दो तोपे (दो सार्जेंट और आठ गोलुदांसेज द्वारा संचालित) 50 घुड़सवार स्वयंसेवक, 40 एच.एम. 60 राइफलें, दो सार्जेंट, 20 सशस्त्र सैनिक और 27 नुजीबों के साथ मेरठ से चला तथा बालैनी के सामने डालूहैडा में हिंडन नदी के तट पर डेरा डाला।''[10]

बसौद गांव का परिचय

बसौद जनपद बागपत का एक सामान्य गाव है। जिसने 1857 की क्रांति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। यह गांव मुस्लिम–त्यागी (धर्मांतरित मुस्लिम) बहुल गांव है। बसौद जो मेरठ से लगभग 30 किमी की दूरी पर[11] मेरठ बागपत मार्ग के रास्ते में आने वाले डौला गांव से 3 किमी[12] हटकर पूर्वी यमुना नहर के किनारे बसा हुआ है। 1857 के समय गांव ज्यादा बडे नही होते थे। गांवो की जनसंख्या भी ज्यादा नही होती थी। उस समय बसौद गांव की आबादी भी सम्भवतः 500 के आस–पास रही होगी। बसौद गांव के लोग प्रारम्भ से ही बहुत सहासी और देशभक्त थे। जनश्रुति के अनुसार इस गांव में नौजवान हो या बुजुर्ग सभी लोग ''पटा'' में बड़े माहिर हुआ करते थे।[13]

भारत के ग्रामीण अंचल में बहुत सी कलाएं विद्यमान रही है। उन्ही में से एक कला थी ''पटा'' की कला। इस कला में व्यक्ति लाठी का महारथी हुआ करता था। जिस व्यक्ति पर भी यह कला आती थी वह दस–दस व्यक्तियों पर भी भारी पड़ता था। जब अंग्रेजों द्वारा इस गांव पर हमला किया गया तो इस गांव के लोगों ने उनके विरूद्व इस अदभूत कला का प्रदर्शन किया था। ग्रामीण की इस अद्भुत कला से अंग्रेज भी हैरान थे। ऐसा कहा जाता है कि अंग्रेजों को यह जादू की भांति लगा था तथा उन्होंने इसे जादूगरों का गांव कहकर संबोधित किया था।[14]

बागपत के सेनानियों तथा नेतृत्वकर्ता बाबा शाहमल के लिए बसौद गांव बहुत महत्वपूर्ण था। सेनानियों के लिए एकत्रित होने ओर फिर किसी कार्यवाही को अंजाम देने के लिए यह एक गुप्त स्थान के रूप में कार्य करता था। इस गांव की वफादारी के कारण वह इस पर अटूट भरोसा करते थे। जो सम्पूर्ण गांव ने अपना बलिदान कर सिद्ध भी किया था। इस गांव की भौगोलिक स्थिति भी इसे क्रांतिकारियों के अनुकूल बनाती थी। यह मेरठ से बागपत आने वाली मुख्य सड़क से दूर हटकर था। इसके एक तरफ पूर्वी यमुना नहर तथा एक और काफी बड़ा जंगल था। जिसकी वजह से एकदम अंग्रेजों द्वारा इस पर हमला करना बहुत कठिन था। इस गांव में पहुंचने के लिए डौला से नहर की पटरी को चलना पडता था और जब तक इस पर हमला होता तब तक यहां से सुरक्षित रूप से निकाला जा सकता था। बाबा शाहमल ने इसी सुरक्षात्मक स्थिती को देखते हुए इस गांव को अपना मुख्यालय भी बनाया हुआ था।[15]

अंग्रेजों द्वारा बसौद पर आक्रमण

16 जुलाई को शाहमल अपने साथियों के साथ बसौद गांव में पहुंचा हुआ था। यह देशभक्ति के जज्बे से परिपूर्ण गांव क्रांति में शाहमल की भरपूर मदद कर रहा था। 16 जुलाई को बसौद में जाने के शाहमल के दो कारण थे।

पहला कारण– वहां दिल्ली क्रांतिकारियों के लिए रसद के रूप में लगभग 8000 मन गेहूं, दाल आदि एकत्र किया हुआ था।[16] जिसे आस–पास के गांवों से एकत्र किया गया था। इस एकत्र रसद को दिल्ली ले जाया जाना था। क्योंकि किसी भी सेना के लिए रसद बहुत बडी ऊर्जा का काम करती है। रसद के बिना कोई भी सेना अधिक समय तक नहीं ठहर सकती।[17] इस एकत्र की हुई रसद को दिल्ली ले जाने के लिए दिल्ली से दो सेनानी जिन्हें गाजी नाम से पुकारा गया है आये हुए थे। जो अंग्रेजों द्वारा बसौद पर आक्रमण किए जाने पर बसौद की मस्जिद से मोर्चा लगाए लड़ते रहे थे।[18]

दूसरा कारण– बसौद से दक्षिण की ओर कुछ दूरी पर स्थित राजपूत बहुल गांव डौला था। यह गांव देश से गद्दारी और अंग्रेजों का मदद कर रहा था। इस गांव का रहने वाला नवलसिंह राजपूत पग–पग पर अंग्रेजों की हरसम्भव मदद कर रहा था। इसी वजह से शाहमल इस गांव को दंडित करने गए इरादा रखता था।[19]

दुसरी ओर खाकी रिसाला विलियम डनलप के नेतृत्व में डालूहैड़ा पहुंचकर हिंडन नदी के तट पर डेरा डाल चुका था। कुछ समय पश्चात डौला गांव की दिशा से भारी गोलीबारी की आवाज सुनाई दी। डौला की डालूहैड़ा से दूरी लगभग 7 मील (लगभग 12 किलोमीटर) थी। इस गोलीबारी के कारण विलियम डनलप के मन में भी भय उत्पन्न हो गया था। उसे पूरी आशा थी कि इस लड़ाई में उनमें में से कुछ लोग कभी वापस नहीं लौट पाएंगे। निरंतर हो रही इस भयंकर गोलीबारी का पता लगाने के लिए उसने डौला निवासी नवलसिंह राजपूत (जो उसका साथ देने और उसे सही मार्ग दिखाने के लिए उसके साथ था) को भेजा।[20] नवलसिंह इस गोलीबारी का पता लगाने के लिए डौला गांव की तरफ गया और वह अपने स्रोतों से पता करके रात के समय ही वापस आ गया। उसने डनलप को जानकारी दी की शाहमल अपने साथियों के साथ बसौद में है तथा वह डौला पर आक्रमण करने वाला है। जिस से घबराकर डौला के मूल निवासी (जो राजपूत थे) अपनी सुरक्षा और शाहमल को डराने के लिए गोलीबारी कर रहे हैं।[21]

बसौद में मौजूद शाहमल व उसके साथियों को भी संभवतः 16 जुलाई की देर रात यह सूचना प्राप्त हो गई थी कि अंग्रेजी सेना उन पर आक्रमण करने के लिए आ रही हैं। क्योंकि एक बावर्ची (जों संभवतः मेरठ से भेजा गया था) ने शाहमल को आकर बताया कि खाकी रिसाला उन्हें खोजने के लिए आ रहा है। जनश्रुति के अनुसार इस बावर्ची को मेरठ के कोतवाल वजीर सिंह ने भेजा था। इस प्रकार की सूचना के प्राप्त होने के बाद शाहमल ने बसौद गांव को छोड़ दिया तथा डौला गांव पर आक्रमण करने की योजना को कुछ समय तक के लिए टाल दिया।[22] बागपत के सेनानियों तथा नेतृत्वकर्ता बाबा शाहमल के लिए बसौद गांव बहुत महत्वपूर्ण था। सेनानियों के लिए एकत्रित होने ओर फिर किसी कार्यवाही को अंजाम देने के लिए यह

एक गुप्त स्थान के रूप में कार्य करता था। बसौद की मुख्य सडक से दूरस्थता, गोपनीयता और सुरक्षा के कारण इसको बागपत के सेनानियों ने अपना मुख्य केन्द्र भी बनाया था।[23]

17 जुलाई की सुबह खाकी रिसाला ने डनलप के नेतृत्व में हिंडन नदी को पार किया तथा बहुत तीव्र गति से डौला होते बसौद पर आक्रमण करने के लिए दौड पडा। डनलप लिखता है कि ''जैसे ही धूसर भोर (बहुत सुबह) हुई हम डौला के पास पहुंच चुके थे जहां से घुड़सवार सेना बसौद को घेरने के लिए सरपट दौड़ पड़ी थी।''[24] जब अंग्रेजी सेना के बसौद पर किये जाने वाले आक्रमण का समाचार शाहमल को प्राप्त हुआ होगा तभी इसका पता बसौद गांव के निवासियों को भी चल चुका होगा और उन्होंने अपने नेता को वहां से सुरक्षित निकल जाने के लिए बाध्य किया होगा। क्योंकि भारतीय परिवेश में माना जाता है कि अगर नेतृत्वकर्ता जीवित है तो संघर्ष जारी रह सकता है। इसीलिए अंग्रेजी सेना के गांव में पहुंचने से पहले वीरवर शाहमल अपने साथियों सहित अंग्रेजों के आगमन की पूर्व सूचना के आधार पर पडोस के ही गांव बड़का के जंगलों की ओर चला गया था।[25]

बसौद निवासियों को यह तो पता चल ही चुका था कि अंग्रेजों द्वारा गांव पर हमला होने वाला है। गांव वालों को यह भी भली–भांती पता था कि अंग्रेज किस क्रुरता का व्यवहार करते हैं लेकिन बसौद के वीर किसानों ने वह किया जो भारत के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित हो गया। जब शाहमल अपने क्रान्तिवीरो के साथ बसौद छोड़ होगा तो उसे भी यह आभास नहीं होगा कि उसके पीछे बसौद के लोगों को कितनी बड़ी कीमत चुकानी होगी।[26]

अब बसौद के निवासियों के पास दो ही विकल्प मौजूद थे–पहला गांव के सभी नर–नारी, बच्चे गांव छोड़कर कही सुरक्षित स्थान पर चले जायें, उससे उनका जीवन बच सकता था। दूसरा विकल्प यह था कि वह अपनी अंतिम सांस तक शत्रु अर्थात अंग्रेजों का सामना करें और इस गांव के वीरों ने अदभ्य साहस का परिचय देते हुए दूसरा विकल्प चुना, परंतु इन गांव के किसानो के पास हथियारों के नाम पर लाठी, डंडा, बल्लम, दरांती आदि ही थे। जबकी उनके सामने एक आधुनिक हथियारो से सज व पूर्ण प्रशिक्षित सेना थी। यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि इन गांव वालों के पास अपने स्वयं के साहस के अतिरिक्त कोई सहायता का स्रोत बाकी नहीं था। सभी अपने नेता के बिना स्वयं की प्रेरणा से अंग्रेजों की सेना से लड़ने के लिए एकत्र हो गये। गांव वालों ने सबसे पहले गांव की सभी महिलाओं और बच्चों को खाकी रिसाला के गांव में पहुंचने से पहले सुरक्षित स्थानों पर भेज दिया था। यह एक निश्चित संकेत होता था कि सभी गांववासी सबसे खराब स्थिति के लिए तैयार हो चुके थे।[27] जब खाकी रिसाला इस मुस्लिम–त्यागी बहुल गांव में पहुंचा तो उसने वहां खाना बनाने व पकाने के बड़े–बडे बर्तन और अन्य वस्तुएं पायी वहां से मनुष्यों के एक बड़े समूह के होने के लक्षण दिखायी दिये।[28] जिससे अंग्रेज आश्वस्त हो गये की एक बडी संख्या में

विद्रोही इस गांव में रूके हुए थे। और ऐसा लग रहा था की उनके आने से कुछ पहले ही यहां से गये होंगे। खाकी रिसाला के सैनिकों ने बसौद को चारों ओर से घेर लिया। इसी समय गांव के बूढ़े और युवा सभी गांव से बाहर आने लगे, उनमें मैचलॉक मैन और तलवारबाज भी थे।[29]

मैचलॉक एक प्रकार की पुरानी मस्कट या बंदूक होती थी। जिसमें गोली को छोड़ने के लिए बत्ती का प्रयोग किया जाता था। इस मैचलॉक गन से गोली चलाने में काफी समय लगता था। ये गांववासी अपने पारंपरिक हथियारों से उस समय की सबसे आधुनिक हथियारों से सुसज्जित व प्रशिक्षित सेना का सामना कर रहे थे। जिसे देखकर अंग्रेज भी दंग रह गए थे। अंगेज अब तक सम्भवतः यह सोच रहे थे कि ये सीधे–सादे ग्रामीण अंग्रेजों की धमक पाते ही सहम कर अपनी जान बचाने के लिए गांव से भाग जायेंगे, परन्तु बसौद के लोगो ने तो मन में कुछ ओर ही ठान रखा था। वह इस अंग्रेजी सेना से भयभीत नही हुए और भय कैसा और क्यो। क्योकि जिसने एक बार दिव्य स्वतंत्रता के लिए उसके चैतन्य से सम्मोहित होकर मृत्यु से ही प्रेम कर लिया हो, वह मृत्यु का भय छोड, मृत्यु के लिए ही उतावला हो गया हो, भला उसे इस विश्व में कौन डरा सकता है। बलिदानी को कौन रोक सकता है। जो जय और कीर्ति के लिए लडतें है वह डरते है पर जो मृत्यु व आजादी के लिए ही लडते हो उन्हे कौन डरा सकता है। जिन्होने केवल मृत्यु की ही आशा की हो, उनके लिए विश्व में निराशा कैसे शेष रह सकती है।[30] बसौद के बहादूर लोगो ने पहले से ही ये सब मन में ठाना हुआ था। इसीलिए वे सब कुछ भुलकर मृत्यु अथवा जय को आलिंगन करने के लिए अंग्रेजों से टकरा गये थे। फिर भी अपने लाठी, डण्डो, दरांती, आदि से ये गांव वाले कब तक इस आधुनिक हथियारों से लैस व प्रशिक्षित सेना के सामने ठहर पाते। इसके बाद भी इन किसानो ने अंग्रेजों का बहुत कडा प्रतिरोध किया जो लगभग 10 घण्टे तक चला। अन्त में जो हथियार चलाने में सक्षम थे उन सभी लोगों को गोली मार दी गयी या तलवार से मार दिये गये। उनके घरों को भी जला दिया गया।[31] अंग्रेजों द्वारा गांव बसौद के साथ किए गए इस वहशीपन के कारण लगभग 180 लोग खाकी रिसाला द्वारा बहुत बेरहमी से मारे गए।[32] इन मरने वाले वीर लोगों में दिल्ली से आए दो क्रांतिकारी गाजी भी थे वे बसौद गांव में आस–पास से एकत्र की गयी रसद दिल्ली ले जाने के लिए आये हुए थे। जब उन्होंने अंग्रेजों को गांव पर हमला करते हुए देखा तो उन्होंने भी बसौद से बाहर बनी मस्जिद में मोर्चा लगा लिया और अपने प्राणों के न्यौछावर होने तक अंग्रेजों से लड़ते रहे। नॉरेटिव आफ इवेंट किताब में लिखा है कि ''यह गाजी बहुत बुरी तरह से लडे थे।''[33]

167 वर्ष पूर्व जब गांवो की जनसंख्या आज की अपेक्षा बहुत कम हुआ करती थी उस समय बसौद में 180 से ज्यादा लोगो ने अपने जीवन का बलिदान कर दिया। इस से सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि गांव में एक भी युवा और वृद्व कोई भी पुरूष जीवित नही बचा होगा। बलिदान होने से पहले बसौद गांव के

लोग बड़ी ही वीरता और साहस के साथ अपने ग्रामीण पारंपरिक हथियारों को लेकर अपने प्राणपण तक अंग्रेजों के सामने डटे रहे। गांव से अंग्रेजों द्वारा केवल 15 लोगों को जीवित पकड़ा गया। जिन्हें सेन्य कमांडेंट के आदेश पर उसी शाम को मार दिया गया।[34]

अंग्रेजी सेना खाकी रिसाला का नेतृत्व कर रहे डनलप को बसौद गांव में शाहमल और अन्य सेनानियों के होने की सूचना तो थी ही इसी के साथ–साथ यह भी सूचना प्राप्त हो चुकी थी कि बसौद में दिल्ली के विद्रोहियों के लिए अनाज का एक बडा भंडार एकत्र किया गया था।[35] गांव में कहर बरपाने के बाद अंग्रेजों द्वारा उस अनाज के भंडार की खोज की गई और अंततः अंग्रेजी सेना द्वारा अनुमानित 8000 मन अनाज, दाल आदि को खोज लिया गया था।[36] अंग्रेजों ने जितना अनुमान लगाया था बसौद में बागपत के सेनानियो द्वारा दिल्ली के क्रान्तिकारियों के लिए एकत्रित की गयी रसद उससे कही ज्यादा थी। अंग्रेजों के पास उस समय ऐसा कोई साधन भी उपलब्ध नहीं था जो उस रसद को वह अपने साथ मेरठ ले जा सके। इसीलिए उस अनाज के विशाल भंडार में अंग्रेजों द्वारा आग लगाने का प्रयास किया गया लेकिन पिछले दिन की बारिश की वजह से वह अनाज का भंडार गीला हो गया था। जिससे उसमें आग नहीं लग पा रही थी। अंग्रेजों की काफी कोशिशो के पश्चात अनाज के भंडार में कुछ आग लग पायी किंतु तभी उसमें भयंकर विस्फोट होने लगे। शायद गांव वालों ने अथवा यहां से जाते समय क्रांतिकारियों ने ऐसी ही किसी संभावना को भापंते हुए उसमें बारूद छुपा दिया होगा। उसमें बहुत से विस्फोट हुए।[37] अकस्मात होने वाले इन विस्फोटो की वजह से अंग्रेजों में भय उत्पन्न हो गया और उन्होंने भय मिश्रित गुस्से में सारे गांव को आग लगा दी। जिससे सारा गांव खंण्डर में परिवर्तित हो गया और गांव को लूट लिया गया।[38]

बसौद गांव के साथ अंग्रेजों ने बहुत क्रूर और अमानवीय व्यवहार किया था। संपूर्ण बसौद ने अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति में सम्मिलित होने की बहुत बड़ी कीमत चुकायी और अपना सर्वोच्च बलिदान दिया। अंग्रेजों द्वारा की गयी इस विनाश लीला से गांव के कुछ लोग बच गए थे। वह डरे नहीं थे वह तो किसी उचित मौके की तलास में थे। बसौद के बचे हुए ये लोग आसपास के खेतों में छुपने के लिए जा चुके थे। इन जांबाज लोगों ने तब भी साहस नहीं छोड़ा जब कुछ समय पहले तक हरा भरा जीवंत गांव अंग्रेजों की क्रुरता और वहशीपन से गांव खंडहर में बदल गया था। चारों तरफ आग ही आग घरों को जलाती नजर आ रही थी। वीरता से अपने प्राणों का बलिदान करने वाले गांव वालों की लाशें गलियों में, तालाब के पास, मस्जिद के पास, पेड़ों पर लटकी हुई थी। ऐसा विभत्स नजारा उन जीवित बचे लोगो ने अपनी आंखों से देखा था। वह वीरवर लोग तो बस या तो खुद को बलिदान करना या फिर अंग्रेजों से मुक्ति चाहते थे। जब गांव का विनाश करके खाकी रिसाला का मुख्य दल गांव से कुछ दूरी पर पहुंच गया तो इस दल के अंत में डॉक्टर कैनन के साथ दस घुड़सवार सैनिक सबसे पीछे रह गये थे। तभी आसपास के खेतों से

निकलकर उन बचे हुए ग्रामीणों ने इस दल पर आक्रमण कर दिया। जिसे देखते हुए खाकी रिसाला का मुख्य दल वापस लौट आया और पुनः खेतों में ही लड़ाई शुरू हो गयी। खाकी रिसाला द्वारा सभी लोगों को मार डाला गया।[39] और अब आगे बढ़ने से पहले अंग्रेजों ने यह सुनिश्चित किया कि गांव में कोई भी जीवित न बचा हो। उसके पश्चात खाकी रिसाला बड़ौत की तरफ आगे बढ़ गया। हालांकि जब खाकी रिसाला द्वारा बसौद पर किए जाने वाले आक्रमण का पता बागपत में क्रांति का नेतृत्व कर रहे बाबा शाहमल को लगा था तो उन्होंने गुप्तचरो द्वारा दिल्ली मुगल सम्राट बहादुर शाह जफर के पास मदद के लिए संदेश भिजवाया था। सम्राट द्वारा भी उसे तुरंत स्वीकृत कर लिया गया क्योंकि वह जानते थे कि अगर अब तक दिल्ली बची हुई है तो उसमें सबसे बड़ा योगदान बागपत के क्रांतिवीरो का है।

अतः सम्राट द्वारा शाहमल व बसौद की मदद के लिए 150 सवार और चार 9–9 पाउंडर बन्दूके, दिल्ली से डौला के लिए तत्काल भेज दी गई। लेकिन अंग्रेजों द्वारा शत्रुओं (क्रांतिवीरों) की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए पर्याप्त जासूसों का जाल बिछाया हुआ था। दिल्ली से मदद की आशंका को देखते हुए अंग्रेजों ने दो जासूसों को दिल्ली रोड (वर्तमान ढिकौली बंथला मार्ग) पर स्थित रटौल गांव (जो रावण उर्फ बड़ा गांव के पास स्थित है) में निगरानी के लिए बैठाया था। वापसी में उन जासूसों में से केवल एक अंग्रेजों के पास वापस आया उसने बताया कि दिल्ली से सेना बसौद या शाहमल की मदद के लिए आ रही है और उसके एक साथी को भी दुश्मनों के घुड़सवार गस्ती दल ने पकड़ लिया है तथा उसे साथ ले गये है। हालांकि डनलप ने संभावना वक्त की थी कि मुसलमान होने के नाते वह इच्छा से दुश्मन के पास चला गया होगा। जब दिल्ली की सेना के अग्रिम गार्ड डौला पहुंचे तो उन्हें बसौद में धुआं उठते खण्डरो के अलावा अंग्रेजों का कोई निशान प्राप्त नहीं हुआ। वह निराश होकर गाजीउद्दीन (गाजियाबाद) की ओर वापस लोट गये।[40]

जनश्रुती के अनुसार डौला के गद्दार जमींदार नवलसिंह के द्वारा गलत जानकारी देकर यह शाही सेना बिना खाकी रिसाला से युद्ध किये ही वापस लौटा दी गयी थी। अगर नवलसिंह जैसे लोगों ने गद्दारी न की होती और इस शाही सेना और खाकी रिसाला में टकराव हो गया होता तो आज बागपत के डौला व बसौद आदि गांव का इतिहास भिन्न होता। बसौद गांव पर इतना कहर बरपाने के बाद भी अंग्रेजों की बदले की आग शांत नहीं हुई और इस गांव को बागी घोषित कर दिया गया। इस गांव की सारी जमीन अंग्रेजों द्वारा छीन कर अंग्रेजों के साथ वफादारी के बदले में डौला गांव के नवलसिंह को दे दी गई। बसौद वालो की कुछ जमीन एक अंग्रेज को भी प्राप्त हुआ जिसके वंशजों ने कुछ वर्षों पहले ही इस जमीन को बेचा है। इस गांव के रहने वालों से उनके बुनियादी अधिकार भी छीन लिए गए। यहां तक कि वह अपने आंगन को लीपने और चूल्हा बनाने के लिए गांव के तालाब से मिट्टी भी नहीं ले सकते थे।[41]

1857 के पश्चात अंग्रेजों के जुल्म इतने बढ गये थे कि नहर की पटरी पर भारतियों को चलने भी नही दिया जाता था। नहर पार करने के लिए अंग्रेज अफसर गांव के लोगो के कंधों पर बैठकर पानी पार करते थे।[42]

अंग्रेजो द्वारा सामान्य भारतीय जन से की जा रही क्रुरता, गांवो में अग्निकांड, और अमानवीय व्यवहार आदि का वर्णन करता हुआ अंग्रेज इतिहासकार होलम्स लिखता है कि ''वृद्व लोग जिन्होने हमारा कुछ बुरा न किया था, अबला महिलाएं जो छाती से अपने बच्चो को लगाये थी, उन्होने हमारी प्रतिहिंसा की तीव्रता का अनुभव वैसे ही किया जैसे बडे अपराधियों ने।''[43] अंग्रेजों द्वारा भारतवासियों पर की गयी क्रुरता इन्सानियत को शर्मशार करने वाली थी। उन्होने मानवता को शर्मसार व दरकिनार कर दिया था।

बसौद गांव जैसी क्रुरता और इन्सानियत के कत्ल पर अंग्रेजों को आडे हाथो लेते हुए 24 जुन 1858 को जॉन ब्राइट, हाउस ऑफ कामन्स में दिये गये अपने भाषण में कहता है कि ''अंग्रेजों ने भारत को जीता था और वहां के लोग अपनी आजादी के लिए लड रहे थे, इसलिए अंग्रेजों ने जो क्रुरता वहां दिखायी वह किसी भी तरह से न्यायपूर्ण नही ठहराई जा सकती।''[44]

अंग्रेजों के विरुद्ध होने वाले इस प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में भारत भूमि के असंख्य वीरों ने अपने प्राणों का बलिदान किया था। उनके पीछे उनकी बीवी, बच्चों को भी जीवन भर यातनओं का शिकार होना पड़ा था। इन असख्यं वीरों के बलिदान के पश्चात भी इतिहास उनके नाम पर मौन है। आज की पीढियों को उन वीरों के नाम तक का पता नहीं परंतु इस आजादी की लड़ाई में संपूर्ण गांव ने अपना बलिदान दिया हो ऐसा उदाहरण मुश्किल ही खोजे मिलेगा। लगभग 167 वर्ष पहले जब गांव की आबादी ज्यादा नहीं होती थी तब मुस्लिम–त्यागी बहुल गांव बसौद के एक, दो व्यक्तियो ने नहीं बल्कि इस संपूर्ण गांव के लोगों ने इस क्रांति में अपने प्राणों की आहुति दी थी। पूरे गांव में एक भी नौजवान बाकी न रहा। बाकी रहा तो बस असहाय व यतीम बच्चे, रोती बिलखती माएं, सूनी उजड़ी मांग लिए विधवाएं और उन वीरवर भाइयों की बहने। प्रतिशोध में अंधे अंग्रेज अपने पीछे ऐसी विनाश लीला छोड़ जाते थे जिसकी कल्पना करना भी कठिन है। जीवित बच्चों और महिलाओं को ही शहीदों का अंतिम संस्कार करना होता था। यदि वह जलते सुलगते गांव में अपने आप को बचा पाये हो तो। आज के सामाजिक परिपेक्ष में जहां यदि किसी स्त्री को किसी परिजन का अंतिम संस्कार करना हो तो लोग बोले भले ही न लेकिन उनकी आंखों में अप्रसन्नता का भाव अवश्य दिखाई देता है। उस समय की कल्पना करो जब बहनों को, बेटियों को, पत्नियों को ही अपने भाइयों का, अपने पिताओं का, अपने पतियों का, अंतिम संस्कार करना पडा होगा। वह कहां से उतना धैर्य लायी होंगी। एक ओर स्वयं को संभालना था, अपने छोटे बच्चों को दिलासा देना था, तो दूसरी ओर अपने भाइयों, अपने पिताओं, अपने पतियों का अंतिम संस्कार करना था। ऐसे करुण दृश्य का वर्णन करने के लिए

मैं शब्द कहां से लाऊं।[45] ह्रदय द्रवित हो उठता है जब हम उस क्रांति के कठिन समय की कल्पना करते है।

भारत के गौरवशाली इतिहास में अपना नाम स्वर्ण अक्षरों में अंकित कराने वाले इस बसौद गांव के जो आज मूल निवासी हैं वह सभी क्रांतिकारी वंशज ही है। क्योंकि किसी एक व्यक्ति ने नहीं बल्कि संपूर्ण गांव ने क्रांति में भाग लिया था और अंग्रेजों द्वारा किए गए नरसंहार में कोई भी पुरुष जीवित नहीं बचा था। आज तक भी इस गांव में कुछ स्थान उस समय की याद दिलाते हैं। बसौद की पूर्व दिशा की ओर से बाहर निकलते समय एक तालाब है कहा जाता है कि उस समय इस तालाब का पानी क्रांतिकारियों के रक्त से लाल हो गया था। इसी के पास 2023 तक वह बरगद का वृक्ष भी मौजूद था जिस पर गांव से जीवित पकडे गये 15 लोगो को फांसी दी गई थी। गांव से बाहर आज भी वह पावन स्थान अर्थात मस्जिद मौजूद है जहां गांव के लोगों ने अपना सर्वोच्च बलिदान दिया था तथा दिल्ली से आए दो क्रांतिकारी अपनी अंतिम सांस तक अंग्रेजो से लडते़ रहे थे। आज भी इतने वर्षो पश्चात अंग्रेजों द्वारा किए गए अत्याचारों और अनाचारों से यह गांव गरीबी के दलदल में फंसा हुआ है। जैसे यह जनपद बागपत 1857 की क्रांति में दिए गए अपने अतुलनीय योगदान के बाद भी उपेक्षा का शिकार ही रहा है वैसे ही इस जनपद के गांव भी आजादी मिलने के पश्चात भी उपेक्षित ही रहे हैं। हालांकि इतनी दुर्दशा के पश्चात भी इस गांव के रहने वाले सभी वीर वंशजों में साहस और देशभक्ति के जज्बे की कोई कमी नहीं है। इस गांव की जामा मस्जिद जो गवाह है इस गांव के बलिदान की। उसे तिरंगे के रंग से रंगा जाता है। गांव की बदत्तर स्थिती और गांव को अपने पूवर्जो के गौरवान्वित करने वाले बलिदान से रूबरू कराने के उद्देश्य से इस गांव के ही रहने वाले क्रांतिकारी वंशज परम आदरणीय मास्टर सत्तार अहमद त्यागी जी ने सन 2007 में गांव के ही कुछ जागरूक नौजवानो को जोडकर ''युवा चेतना समिति'' को रजिस्ट्रड कराया। जिसके तत्वाधान में प्रतिवर्ष 17 जुलाई को इस गांव का बलिदान दिवस मनाया जाता है तथा एक देशभक्ति से ओत–प्रोत भव्य कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। जो स्वयं में एकता और देशभक्ति की मिसाल प्रस्तुत करता है।

बसौद गांव के जज्बातो को मास्टर सत्तार अहमद त्यागी जी ने शब्दों में पिरोया है उन शब्दो में आज भी देशभक्ति का वही जज्बा कायम है जो इनके पूर्वजों में रहा था। मास्टर जी कहते हैं–

बसौद के लोगों ने वतन को ऐसी निशानी दे दी।

खून से लिखी अपनी अमिट कहानी दे दी।।

मादरे हिन्द ने जब मांगी दूध की कीमत।

बसौद के लोगों ने जान–ओ–माल की कुर्बानी दे दी।।[46]

बागपत के एक दो नही, हजारो वीर नायको का हुजूम देश की स्वतंत्रता के समर में आगे बढा, जूझा और रक्तदान से भावी पीढियों के लिए अनुपम आदर्श प्रस्तुत कर गया। तत्कालीन भारत अपनी नैतिक और सामाजिक मान्यताओं को लेकर अत्यन्त रूढी और पतनोन्मुख हो गया था। इससे कोई भी न्यायप्रिय व्यक्ति इनंकार नही कर सकता, परन्तु 1857–58 की क्रान्ति यह सिद्व करती है कि भारत में कोई ऐसी विशेषता अवश्य विद्यमान रही है जिसने इसको पतन में भी अपनी महत्ता का जोरदार प्रमाण प्रस्तुत कर दिया था।[47]

नमन है इस जज्बे को, नमन है इस गांव को, नमन है इस गांव की पावन मिट्टी को, नमन है उन बलिदानियों को जिन्होंने हंसते–हंसते अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया तथा अंग्रेजों की प्रशिक्षित सेना के सामने अपने सामान्य और पारम्परिक हथियारो से खड़े होने का सहास किया, नमन है इस गांव के देशभक्ति के जज्बे को, नमन है इसकी आज भी विद्यमान एकता को और नमन है उन वीर बलिदानियों के वंशजों को जो आज भी उस जज्बे को कायम रखे हुए हैं।

निष्कर्ष

1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में संपूर्ण भारतवर्ष अंग्रेजों के शोषण और लूट के विरूद्व संगठित होकर उठ खड़ा हुआ था। सभी क्षेत्रों में जनता ने अपने–अपने स्तर से अंग्रेजों के विरूद्व इस क्रांति में अपना योगदान दिया। यह क्रांति मेरठ से शुरू हुई और जल्दी ही दिल्ली इसका केंद्र बन गयी। दिल्ली और मेरठ दोनों के अति नजदीक होने के कारण इस क्रांति में बागपत का विशेष योगदान रहा है। हालांकि आज का जनपद बागपत उस समय मेरठ जनपद का ही अंग था। यहां के क्रांतिवीर सेनानियों ने अपने सामर्थ्य और जज्बे से अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिए थे। बागपत के लगभग सभी गावों ने इस क्रांति में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से भाग लिया था। जनपद के 60 गांवों के किसान तो बागपत में क्रांति का नेतृत्व कर रहे शाहमल की सेना में भर्ती होकर अंग्रेजों के विरूद्व अन्त तक लडते रहे थे। क्रांति के बाद अंग्रेजी सरकार द्वारा बागपत के 29 गांवो को बागी घोषित किया गया। उन गांवों से उनके बुनियादी अधिकार तक छीन लिए गये। गावं बसौद ने इस क्रांति में एक ऐसा उदहारण पेश किया जिसे हमेशा याद किया जायेगा। उसने उस ब्रिटिश शासन को चुनौती दे डाली जिसके साम्राज्य में कभी सुर्यास्त तक नही होता था। जिस समय गांव बहुत छोटे होते थे, जनसंख्या कम थी, संचार के साधन नही थे, तब बसौद ने भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने के लिए अपने सहास के बल पर उनके आधुनिक हथियारों से मुकाबला अपने गांव के पारम्परिक हथियार जैसे लाठी, डन्डे, फरसा, दरांती आदी से किया। बसौद के 180 से उपर लोगो का बलिदान हो गया था। उस समय तो गावं मे सम्भवतः कोई भी पुरूष, बुढा या नौजवान बाकी नही रहा होगा। बसौद की सारी जमीने छीन ली गयी, बुनियादी अधिकारो से वंचित कर दिया गया भारत के

इतिहास में शायद ही ऐसा उदहारण मिल पाये जब देश की आजादी की खातिर सम्पूर्ण गावं ने अपना बलिदान दिया हो।

भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की संज्ञा प्राप्त 1857 की क्रांति में जनपद बागपत की और गावं बसौद की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। बसौद गांव के किसानों ने अपनी जान और माल की कुर्बानी हंसते–हंसते दे दी पर पीछे नहीं हटे, परंतु दुर्भाग्य की कुछ गद्दारों ने अपने हितों को साधने के लिए भारत और भारत के वीर सपूतों से दगा किया और अंग्रेजों के पांव चूमने लगे। जनपद बागपत के बसौद गांव की 1857 की क्रांति में इतनी महत्वपूर्ण भूमिका होने के बाद भी यह दुखद पहलू ही है कि 167 वर्ष बीत जाने के पश्चात भी गांव अंग्रेजों के दिये जख्मो से उबर नही पाया है। जनसंख्या जरूर बढी है पर कोई भी सुविधा गांव में नही है। आज भी गाव का अपना कोई रकबा तक नही है। यह गरीबी के दलदल में आज तक धंसा हुआ हैं। जमीन न होने के कारण यह गांव मजदुर बन गया था और आज भी है। आजादी के बाद भी इसकी स्थिती में कोई सुधार नही हुआ। यहा तक की गांव बसौद इंटर कॉलेज और बैंक जैसी सुविधाओं से भी वंचित है। इतिहासकारों और स्वतंत्र भारत की सरकारो की नजर में यह गांव उपेक्षा का शिकार ही रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ उपाध्याय विश्वमित्र, सन् सत्तावन के भूले–बिसरे शहीद, भाग 2, प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार, पृ0 10।
2. जोशी ईशा बसन्ती, मेरठ गजेटियर, 1965, पृ0 54।
3. डॉ0 शर्मा महेन्द्र नारायण और डॉ0 राकेश शर्मा, सन् सत्तावन का क्रान्तिवीर बाबा शाहमल जाट, पब्लिसर दि जनरल ऑफ दि मेरठ युनिवर्सिटी हिस्ट्री एलुमिनी, पृ0 52।
4. गांधी ए0 के0, 1857 क्रान्ति व क्रान्तिधरा, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज–II बसंत कुंज, नई दिल्ली, 2016, पृ0 66–67।
5. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, सर्विस एण्ड एडवेन्चर विद खाकी रिसाला, रिर्चड बेन्टली, न्यू बुरलिंगटोन स्ट्रीट, लन्दन, 1858, पृ0 91।
6. पूर्वोक्त, पृ0 59–60।
7. यंग कीथ, एण्ड सर नोरमन हेनरी वाईली, दिल्ली 1857, लन्दन 1902, पृ0 141।
8. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 55–56।
9. नेविल एच. आर., डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स ऑफ दि यूनाइटेड प्रोविन्सिज ऑफ आगरा एण्ड अवध, गजेटियर ऑफ मेरठ,1904, पृ0 177।
10. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 92।
11. गांधी ए0 के0, 1857 क्रान्ति व क्रान्तिधरा, पूर्वोक्त, पृ0 82।
12. स्पादक श्बिली अरसलान, कान्ति मासिक पत्रिका, नई दिल्ली, जुलाई 2024, पृ0 32।
13. पूर्वोक्त, पृ0 33।
14. डॉ उपाध्याय विश्वमित्र, सन् सत्तावन के भूले–बिसरे शहीद, प्रकाशन विभाग सूचना एंव प्रसारण मन्त्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली, पृ0 11।
15. डॉ0 शर्मा कृष्ण कान्त, अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति में बागपत के कृषकों की भूमिका, शहजाद राय शोध संस्थान, पृ0 135।
16. स्टोक्स ऐरिक, द पीसेन्ट आर्मड द इण्डियन रिवोल्ट ऑफ 1857, कलारेन्डोन प्रेस, आक्सफोर्ड, 1986, पृ0 162।
17. गांधी ए0 के0, 1857 क्रान्ति व क्रान्तिधरा, पूर्वोक्त, पृ0 82।
18. पुण्डीर विमला (सम्पादिका), पत्रिका केशव संवाद, सूरज कुंड, मेरठ, मई 2007, पृ0 57।
19. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 93।
20. पूर्वोक्त।
21. पूर्वोक्त।
22. गांधी ए0 के0, 1857 क्रान्ति व क्रान्तिधरा, पूर्वोक्त, पृ0 67।

23. डॉ0 शर्मा कृष्ण कान्त, अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति में बागपत के कृषकों की भूमिका, पूर्वोक्त, पृ0 135।
24. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 93।
25. डॉ0 शर्मा कृष्ण कान्त, अट्ठारह सौ सत्तावन की क्रांति में बागपत के कृषकों की भूमिका, पूर्वोक्त, पृ0 135।
26. गांधी ए0 के0, 1857 क्रान्ति व क्रान्तिधरा, पूर्वोक्त, पृ0 82।
27. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 94।
28. फ्रॉम एफ. विलियमस, टू विलियम म्यूर, नेरेटिव ऑफ इवेंटस ऑफ अटेंडिग द आउट ब्रेक ऑफ डिस्टर्बेंसस एण्ड द रेस्टोरेशन ऑफ अथॉरिटी इन द डिस्ट्रिक्ट ऑफ मेरठ, इन 1857–58, नवम्बर 1858, पृ0 43।
29. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 94।
30. सावरकर विनायक दामोदर, 1857 का स्वतंत्रता समर, प्रकाशक प्रभात पेपरबैक्स, 2017, पृ0 317।
31. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 94।
32. स्टोक्स ऐरिक, द पीसेन्ट आर्मड द इण्डियन रिवोल्ट ऑफ 1857, पूर्वोक्त, पृ0 162।
33. फ्रॉम एफ. विलियमस, टू विलियम म्यूर, नेरेटिव ऑफ इवेंटस, पूर्वोक्त, पृ0 43।
34. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 94।
35. पूर्वोक्त।
36. स्टोक्स ऐरिक, द पीसेन्ट आर्मड द इण्डियन रिवोल्ट ऑफ 1857, पूर्वोक्त, पृ0 162।
37. डॉ मिततल एस. के., डॉ शर्मा के. डी., डॉ पाठक अमित, साझी शहादत के कुछ फूल 1857, नेहरू युवा केन्द्र संगठन, नई दिल्ली, पृ0 95। फ्रॉम एफ. विलियमस, टू विलियम म्यूर, नेरेटिव ऑफ इवेंटस, पूर्वोक्त, पृ0 43।
38. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 95–96।
39. फ्रॉम एफ. विलियमस, टू विलियम म्यूर, नेरेटिव ऑफ इवेंटस, पूर्वोक्त, पृ0 43।
40. डनलप वालेस हेनरी रार्बट, खाकी रिसाला, पूर्वोक्त, पृ0 95।
41. गांधी ए0 के0, 1857 क्रान्ति व क्रान्तिधरा, पूर्वोक्त, पृ0 84।
42. हिन्दुस्तान समाचार पत्र, बागपत, 2 अगस्त 2022।
43. होल्म्स टी. आर. ई., ए हिस्ट्री ऑफ इडियन म्यूटिनी, लन्दन, 1883, पृ0 220।
44. शर्मा रामविलास, सन सत्तावन की राज्य क्रांति, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा, प्रथम संस्करण, 1957, पृ0 41।
45. गांधी ए0 के0, 1857 क्रान्ति व क्रान्तिधरा, पूर्वोक्त, पृ0 88–89।
46. साक्षात्कार, सत्तार अहमद, गांव बसौद,
47. नागर अमृतलाल, गदर के फूल, प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग उत्तर प्रदेश, पृ0 117।